वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 404
ISBN-978-93-82071-91-4

समवसरण चैत्यवृक्ष विधान

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

हस्तिनापुर में जन्मे तीर्थंकर, चक्रवर्ती एवं कामदेव पद से समन्वित भगवान श्री शांतिनाथ के केवलज्ञानकल्याणक, पौष शु. दशमी-10 जनवरी 2014 के अवसर पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अमृत महोत्सव 2013-14 के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com Facebook : jaintirthjambudweep

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	पौष शु. दशमी, 10 जनवरी 2014	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी

अर्हन्तो मंगलं कुर्युः सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम्।।1।।

मंगलं जिनधर्मः स्यात, जिनवाणी च मंगलम्।
जिनार्चा जिनगेहाश्च कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।

वर्तमान में सभी मनुष्यों का जीवन मंगलमयी हो, इसके लिए देवदर्शन, भगवान का अभिषेक, पूजन, भगवान की भक्ति, मण्डल विधानों का आयोजन मंगल साधन है। जिनेन्द्रदेव की भक्ति, स्तुति कर्मनिर्जरा में विशेष कारण है। भक्त भगवान की भक्ति करते–करते एक दिन स्वयं भगवान बन जाता है। पूज्य माताजी हमेशा अपने प्रवचनों में कहती हैं प्रत्येक प्राणी की आत्मा भगवान आत्मा है। जैसे दूध में घी विद्यमान है वैसे ही प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त कर, आर्यिका ज्ञानमती नाम को पाकर, पूरे विश्व में ज्ञान का अलख जगाने वाली पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने साहित्य जगत में 300 ग्रंथों की रचना करके एक कीर्तिमान स्थापित किया है। 365 दिनों में प्रायः कहीं न कहीं पूज्य माताजी द्वारा रचित, इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, शान्तिविधान, जिनगुणसम्पत्ति विधान आदि होते रहते हैं।

विधानों की श्रृंखला में यह 'समवसरण चैत्यवृक्ष विधान' एक नया विधान है जिसमें भगवान के समवसरण में स्थित उपवनभूमि में जिनप्रतिमाओं सहित चैत्यवृक्षों की पूजा एवं अर्घ्य हैं। यह विधान भगवान के समवसरण के अतिशय का वर्णन करने वाला है। इस विधान को करके सभी भव्य जीव जीवन में सुख, शान्ति, समृद्धि को प्राप्ति करें, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी स्वस्थ रहें, दीर्घायु को प्राप्त करें और वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि को प्राप्त हो, यही जिनेन्द्रदेव से कामना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

भक्ति मार्ग में प्रवृत्त हुआ प्रत्येक प्राणी निवृत्ति की साधना करता हुआ अपनी चिच्चैतन्यस्वरूपी आत्मा को उज्ज्वल करके भगवान बना सकता है। श्रावक चूँकि सावद्य से पूर्ण निवृत्त नहीं हो सकता है तथापि अपने पाप पुंज को अल्प अथवा परम्परागत नष्ट करने के लिए आत्महित के साधन गृहस्थ के षट्कर्त्तव्य का पालन करना उसके लिए आवश्यक होता है।

देवपूजा के अन्तर्गत इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र, शांतिनाथ आदि विधान जो कि नैमित्तिक कार्य होते हैं। इनके द्वारा आत्मा में विशेष विशुद्धि उत्पन्न होती है। आष्टान्हिक पर्वों में सिद्धचक्र विधान करने की प्राचीनकाल से परम्परा चली आ रही है।

पूजा विधानों की श्रृंखला में परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने यह 'समवसरण चैत्यवृक्ष विधान' अद्भुत कृति के रूप में हमें प्रदान किया है। जिस प्रकार से लोग शान्तिविधान को एक दिन में सम्पन्न करके भगवान शान्तिनाथ की आराधना कर लेते हैं। उसी प्रकार से इस 'समवसरण चैत्यवृक्ष विधान में' 24 तीर्थंकरों के समवसरण में स्थित उपवन- भूमि में चारों दिशाओं में 1–1 चैत्यवृक्ष सम्बन्धी 24 × 4 = 96 चैतयवृक्ष हैं। एक-एक चैत्यवृक्ष में 4-4 प्रतिमाएँ होने से 96×4=384 जिनप्रतिमाओं की आराधना करके महान पुण्य का अर्जन करते हैं और एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन करके उसके अगणित वैभव को देखते हैं। पूज्य माताजी ने समवसरण पूजा के अंत में लिखा है–

जो भविजन प्रभु समवसरण में, सब चैत्यवृक्ष को यजते हैं।
श्रीजिनबिम्बों के वंदन से, सम्पूर्ण सौख्य को भजते हैं।।
प्रभु समवसरण में जा करके, अगणित वैभव को निरखे हैं।
वे निश्चित ही सम्पूर्ण ज्ञानमति, जिनगुण संपति लभते हैं।।

इस विधान में 2 पूजा हैं, 96 अर्घ्य हैं, 1 पूर्णार्घ्य, 2 जयमाला और अंत में प्रशस्ति है।

पूर्णार्घ्य में पूज्य माताजी ने लिखा है समवसरण में उपवन भूमि में चारों दिशा में 1–1 चैत्यवृक्ष हैं। प्रत्येक चैत्यवृक्ष में 4–4 जिनप्रतिमाएँ हैं। अतः

24×4=96 चैत्यवृक्ष एवं 96×4=384 जिनप्रतिमाएँ हैं। सभी जिनप्रतिमाओं के सामने 1-1 मानस्तंभ है और 1–1 मानस्तंभ में 4–4 जिनप्रतिमाएँ है। इस प्रकार कुल मिलाकर 24 तीर्थंकर के समवसरण में 96 चैत्यवृक्ष सम्बन्धी 384 मानस्तंभ हैं और प्रत्येक मानस्तंभ में 4–4 जिनप्रतिमाएँ हैं। अतः मानस्तंभ की 96 × 4 = 384 × 4 = 1536 जिनप्रतिमाएँ हैं। पूज्य माताजी ने इस सभी जिनप्रतिमाओं के लिए पूर्णार्घ्य में लिखा है–

चौबीस जिनवर के समवसरण में, चौथी उपवन भू मानी है।
चारों दिश इक इक चैत्यवृक्ष, चहुँदिश जिनप्रतिमा मानी हैं।।
चारों दिश की जिनप्रतिमा के, सन्मुख में मानस्तंभ खड़े।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ा करके, दिन पर दिन सुख सौभाग्य बढ़े।।

यह 'समवसरण चैत्यवृक्ष विधान' लघु होते हुए भी चमत्कारिक विधान है। इस विधान को करने से रोग, शोक, दारिद्र्य, दुख, संकट आदि बाधाएँ दूर होंगी। सुख, संपत्ति एवं अनुक्रम से जिनगुण सम्पत्ति की प्राप्ति होगी।

इस विधान को करने, कराने वाले सभी महानुभाव भगवान के समवसरण का परोक्ष में दर्शन, वंदन, भक्ति करके महान पुण्य का अर्जन करें और अपने मनवांछित कार्य की सिद्धि करें, यही मंगल भावना है।

दो शब्द

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नमस्तस्यै सरस्वत्यै, विमलज्ञानमूर्तये।
विचित्रालोकयात्रेयं, यत्प्रसादात्प्रवर्तते।।

सरस्वती माता को नमन करते हुए वर्तमान में भगवान महावीर के शासनकाल में साक्षात् सरस्वती स्वरूपा, 300 ग्रंथों की लेखिका, क्वाँरी कन्याओं की पथप्रदर्शिका, वर्तमान में पीछीधारी साधुओं में सबसे प्राचीन दीक्षित, चारित्र चक्रवर्ती प्रथमाचार्य श्री शान्तिसागर महाराज के 3 बार दर्शन करने वाली, उनसे अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाली, चारित्र चूड़ामणि प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर महाराज के करकमलों से दीक्षित परमपूज्य चारित्र- चन्द्रिका गणिनीप्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी को नमन करती हूँ।

आज के भौतिक युग में लोगों को धर्ममार्ग में लगाने के लिए भगवान की भक्ति, पूजा विधान आदि सशक्त माध्यम है। जब लोग पूज्य माताजी द्वारा रचित विधानों की पूजा करते हैं तो एक–एक पंक्ति पढ़कर भक्ति में भाव विभोर हो जाते हैं। उनके पैर थिरकने लगते हैं। भक्तिभाव से पूजा करके असंख्य कर्मों की निर्जरा कर लेते हैं।

पूज्य माताजी के सानिध्य में जम्बूद्वीप हस्तिनापुर में प्रतिदिन कोई न कोई विधान होता ही रहता है। माईक के द्वारा विधान की स्वर लहरी गूँजती ही रहती है। जिससे जम्बूद्वीप का सारा परिसर मुखरित होता रहता है। मुझे भी जब–तब विधानों को करने, कराने का अवसर प्राप्त होता रहता है।

मैं अपना परम सौभाग्य मानती हूँ कि मुझे ऐसी महान माताजी के कुल में (बहन की पुत्री के रूप में) जन्म लेने का एवं उनकी शिष्या बनने का अवसर प्राप्त हुआ है। यह विधान मेरे जीवन के लिए चमत्कारिक हो, गुरु की भक्ति, वैय्यावृत्ति करते हुए मैं रत्नत्रय को प्राप्त कर अपनी मानव पर्याय को सार्थक करूँ, यही मंगल भावना है।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
1. समवसरण का वर्णन	1
2. समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी	3
3. मंगलाचरण	6
4. समवसरण पूजा	8
5. समवसरण चैत्यवृक्ष पूजा	13
6. प्रशस्ति	38
7. आरती	39
8. समवसरण की आरती	40
9. समवसरण विंशतिका	41
10. समवसरण चालीसा	46
11. भजन	48

मण्डल का नक्शा

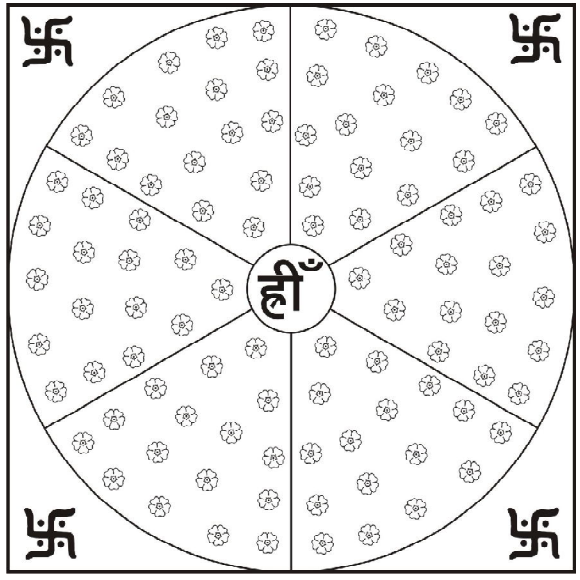

पूजा-2, कुल अर्घ्य-96, पूर्णार्घ्य-1, जयमाला-2

समवसरण का वर्णन

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथतीर्थंकराय नमः

भगवान को केवलज्ञान प्रगट होते ही इन्द्र की आज्ञा से कुबेर अर्धनिमिष में समवसरण की रचना कर देता है। उस समय भगवान तीनों लोकों को और उनकी भूत, भावी, वर्तमान समस्त पर्यायों को युगपत् एक समय में जान लेते हैं।

भगवान शांतिनाथ का समवसरण पृथ्वी से 5000 धनुष (20000 हाथ) ऊपर आकाश में अधर है। पृथ्वी से एक हाथ ऊपर से एक-एक हाथ ऊँची बीस हजार सीढ़ियाँ हैं। इनसे चढ़कर मनुष्य और तिर्यंच आदि सभी भव्य जीव-बाल, वृद्ध, अंधे, लूले, लंगड़े, रोगी आदि अंतर्मुहूर्त (48 मिनट) में ऊपर पहुँच जाते हैं। भगवान ऋषभदेव का समवसरण 12 योजन (96 मील) का है। आगे घटते-घटते महावीर स्वामी का समवसरण एक योजन (8 मील) का है।

इसमें चार परकोटे और पाँच वेदियाँ हैं। इनके आठ भूमियाँ हैं। चारों दिशाओं में बहुत ही विस्तृत वीथी बड़ी-बड़ी गलियाँ हैं।

इस समवसरण में क्रम से पहले धूलिसाल परकोटा, चैत्यप्रासाद भूमि, वेदी, खातिकाभूमि, वेदी, लताभूमि, परकोटा, उपवनभूमि, वेदी, ध्वजभूमि, परकोटा, कल्पभूमि, वेदी, भवनभूमि, परकोटा, श्रीमण्डपभूमि और वेदी है। आगे

16 सीढ़ी ऊपर चढ़कर पहली कटनी, 8 सीढ़ी चढ़कर दूसरी कटनी, पुनः 8 सीढ़ी चढ़कर तीसरी कटनी है। इसी पर भगवान विराजमान हैं।

प्रत्येक परकोटे और वेदियों में चारों दिशाओं में एक-एक गोपुर द्वार हैं। जिनमें से पूर्वदिशा में "विजय", दक्षिण में "वैजयंत" पश्चिम में "जयंत" और उत्तर में "अपराजित" ऐसे नाम हैं। इन चारों के उभय पार्श्व में दो-दो नाट्यशालाएं हैं, जिनमें देवांगनाएं भगवान की भक्ति में विभोर हो नृत्य-गान करती रहती हैं। वहाँ द्वारों के दोनों और नवनिधि, मंगलघट और धूपघट आदि स्थित हैं। प्रत्येक परकोटे के द्वारों पर देवगण हाथ में दण्ड, मुद्गर आदि लेकर रक्षक बनकर खड़े हुए हैं।

24 तीर्थंकरों के समवसरण का प्रमाण

1.	भगवान ऋषभदेव का समवसरण	12 योजन (96 मील)
2.	भगवान अजितनाथ का समवसरण	$11\frac{1}{2}$ योजन (92 मील)
3.	भगवान संभवनाथ का समवसरण	11 योजन (88 मील)
4.	भगवान अभिनंदननाथ का समवसरण	$10\frac{1}{2}$ योजन (84 मील)
5.	भगवान सुमतिनाथ का समवसरण	10 योजन (80 मील)
6.	भगवान पद्मप्रभु का समवसरण	$9\frac{1}{2}$ योजन (76 मील)
7.	भगवान सुपार्श्वनाथ का समवसरण	9 योजन (72 मील)
8.	भगवान चंद्रप्रभ का समवसरण	$8\frac{1}{2}$ योजन (68 मील)
9.	भगवान पुष्पदंतनाथ का समवसनण	8 योजन (64 मील)
10.	भगवान शीतलनाथ का समवसरण	$7\frac{1}{2}$ योजन (60 मील)
11.	भगवान श्रेयांसनाथ का समवसरण	7 योजन (56 मील)
12.	भगवान वासुपूज्यनाथ का समवसरण	$6\frac{1}{2}$ योजन (52 मील)
13.	भगवान विमलनाथ का समवसरण	6 योजन (48 मील)
14.	भगवान अनंतनाथ का समवसरण	$5\frac{1}{2}$ योजन (44 मील)
15.	भगवान धर्मनाथ का समवसरण	5 योजन (40 मील)
16.	भगवान शांतिनाथ का समवसरण	$4\frac{1}{2}$ योजन (36 मील)
17.	भगवान कुंथुनाथ का समवसरण	4 योजन (32 मील)
18.	भगवान अरनाथ का समवसरण	$3\frac{1}{2}$ योजन (28 मील)

19. भगवान मल्लिनाथ का समवसरण 3 योजन (24 मील)
20. भगवान मुनिसुव्रतनाथ का समवसरण $2\frac{1}{2}$ योजन (20 मील)
21. भगवान नमिनाथ का समवसरण 2 योजन (16 मील)
22. भगवान नेमिनाथ का समवसरण $1\frac{1}{2}$ योजन (12 मील)
23. भगवान पार्श्वनाथ का समवसरण $1\frac{1}{4}$ योजन (10 मील)
24. भगवान महावीर स्वामी का समवसरण 1 योजन (8 मील)

समवसरण में प्रवेश करते ही चारों गली में दिव्य रत्नमय मानस्तंभ हैं जो कि भगवान से बारहगुने ऊँचे हैं। जैसे कि– भगवान शांतिनाथ के शरीर की ऊँचाई 160 हाथ है अतः ये बारहगुणे अर्थात् 160×12=1920 हाथ ऊँचे हैं। बीस योजन तक प्रकाश फैलाते हैं। इनके दर्शन से मानी का मान गलित हो जाता है और वह भव्यात्मा सम्यग्दृष्टि बनकर अनंत संसार को सीमित कर लेता है।

केवली भगवान के प्रभाव से चारों तरफ चार सौ कोस तक सुभिक्षता, हिंसा और उपसर्गादि का अभाव, सभी जन्मजात शत्रु-सिंह, हिरण आदि का आपस में मैत्री भाव, छहों ऋतुओं के फल-फूलों का एक साथ आ जाना आदि अतिशय हो जाते हैं।

भगवान के श्रीविहार में आकाश में अधर, उनके चरण के नीचे देवगण स्वर्णमय सुगंधित दिव्य कमलों को रचते जाते हैं और अहिंसा धर्म के दिग्विजय को सूचित करता हुआ 'धर्मचक्र' भगवान के आगे-आगे चलता है एवं सरस्वती-लक्ष्मी देवी आजू-बाजू में चलती हैं। आकाशगामी ऋद्धिधारी साथ में चलते हैं, असंख्य देव-देवियाँ, इन्द्रादिगण पीछे-पीछे चलते हैं एवं साधारण मुनि, आर्यिकाएं, मनुष्य, पशु आदि नीचे-नीचे चलते हैं। जहाँ भगवान रुक जाते हैं वहाँ पुनः कुबेर समवसरण की रचना कर देता है।

समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी

1. पहली ''चैत्यप्रासादभूमि'' है, इसमें एक-एक जिनमंदिर के अंतराल में पांच-पांच प्रासाद हैं।

2. दूसरी ''खातिकाभूमि'' है, इसके स्वच्छ जल में हंस आदि कलरव कर रहे हैं और कमल आदि पुष्प खिले हैं।

3. तीसरी ''लताभूमि'' है, इसमें छहों ऋतुओं के पुष्प खिले हुए हैं।

4. चौथी ''उपवनभूमि'' है, इसमें पूर्व आदि दिशा में क्रम से अशोक, सप्तच्छद, चंपक और आम्र के वन हैं। प्रत्येक वन में एक-एक चैत्यवृक्ष हैं जिनमें 4-4 जिनप्रतिमाएं विराजमान हैं। प्रत्येक प्रतिमाओं के सामने एक-एक मानस्तंभ हैं।

5. पांचवी ''ध्वजाभूमि'' है, इसमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन दस चिन्हों से सहित महाध्वजाएं और उनके आश्रित लघुध्वजाएं 108-108 हैं। सब मिलाकर 4,70,880 हैं।

6. छठी ''कल्पभूमि'' है, इसमें भूषणांग आदि दस प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। चारों दिशा में क्रम से नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात ऐसे एक-एक सिद्धार्थवृक्ष हैं। इनमें चार-चार सिद्धप्रतिमाएं विराजमान हैं ।

7. सातवीं ''भवनभूमि'' में भवन बने हुए हैं। इस भूमि के पार्श्व भागों में अर्हंत और सिद्धप्रतिमाओं से सहित नौ-नौ स्तूप हैं।

8. आठवीं ''श्रीमण्डपभूमि'' है, इसमें 16 दीवालों के बीच में 12 कोठे हैं जिनमें 1. गणधरादि मुनि, 2. कल्पवासिनी देवी, 3. आर्यिका और श्राविका, 4. ज्योतिषी देवी, 5. व्यंतर देवी, 6. भवनवासिनी देवी, 7. भवनवासी देव, 8. व्यंतर देव, 9. ज्योतिष देव, 10. कल्पवासी देव, 11. चक्रवर्ती आदि मनुष्य और 12. सिंहादि तिर्यंच, ऐसे बारहगण के असंख्यातों भव्यजीव बैठकर धर्मोपदेश सुनते हैं। वहां पर रोग, शोक, जन्म, मरण, उपद्रव आदि बाधाएं नहीं हैं।

प्रथम कटनी पर पूजा द्रव्य एवं मंगल द्रव्य रखे हुए हैं। इसी प्रथम कटनी पर चारों दिशाओं में यक्षेन्द्र अपने मस्तक पर धर्मचक्र धारण किये हुए हैं।

द्वितीय कटनी पर सिंह, बैल, कमल, चक्र, माला, गरुड़ और हाथी इन आठ चिन्हों से युक्त महाध्वजाएं हैं तथा धूपघट, नवनिधियाँ, पूजन द्रव्य एवं मंगलद्रव्य स्थित हैं।

तृतीय कटनी पर गंधकुटी में सिंहासन पर लाल कमल की कर्णिका पर भगवान शांतिनाथ चार अंगुल अधर विराजमान हैं। इनका मुख एक तरफ होते हुए भी चारों तरफ दिखने से ये चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाते हैं। भगवान के पास अशोकवृक्ष, तीन छत्र, सिंहासन, भामंडल, चौंसठ चंवर, सुरपुष्पवृष्टि, दुंदुभि बाजे और हाथ जोड़े सभासद ये आठ महाप्रातिहार्य हैं। सभी समवसरण में उन-

उन तीर्थंकर के शासन देव-देवी विद्यमान हैं। जैसे कि भगवान शांतिनाथ के समवसरण में गरुड़ यक्ष और महामानसी यक्षी विद्यमान हैं।

श्री शांतिनाथ भगवान को मेरा अनंतबार नमस्कार हो।

इस समवसरण का वर्णन तिलोयपण्णत्ति, हरिवंशपुराण और समवसरण स्तोत्र के आधार से हैं।

इस समवसरण चैत्यवृक्ष विधान में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में चौथी उपवन भूमि में स्थित चैत्यवृक्षों के जिनबिम्बों की पूजा है।

समवसरण चैत्यवृक्ष विधान

मंगलाचरणम्

अर्हन्तस्तीर्थकर्तारो, नित्यं कुर्वन्तु मंगलम्।
एतेषां प्रतिमाश्चापि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।1।।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केवलिणो ओहिणाणिणो मणपज्जवणाणिणो चउदसपुव्वंगमिणो सुदसमिदि-समिद्धा य तवो य वारहविहो तवस्सी, गुणा य गुणवंतो य, महरिसी तित्थं तित्थंकरा य, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणदा य, बंभचेरवासो बंभचारी य, गुत्तीओ चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ चेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ चेव समिदिमंतो य, ससमयपर-समयविदू, खंतिक्खवगा य खंतिवेगा य, खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहियबुद्धा य बुद्धिमंतो य, चेइयरुक्खा य चेइयाणि[1]।

-चौबोल-छंद-

मेरा मंगल करें सर्व, अर्हंत सिद्ध बुद्धा जिनराज।
केवलि जिन अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी ऋषिराज।।
चौदश पूर्व अंग पारंगत, अंगबाह्य श्रुतसंपन्ना।
बारह तप तपसी गुण और, गुणोंयुत महाऋद्धि शरणा।।2।।

तीर्थ और तीर्थंकर प्रवचन, प्रवचनयुत व ज्ञान ज्ञानी।
सद्दर्शन सम्यग्दृष्टी, संयम व संयमी मुनिध्यानी।।
विनय तथा सुविनययुत साधू, ब्रह्मचर्य व्रत ब्रह्मचारी।
गुप्ति गुप्तिधर मुक्ति मुक्तियुत, समिति और समितिधारी।3।।

स्वमत और परमत के ज्ञाता, क्षमाशील अरु क्षपक मुनी।
क्षीणमोह यति बोधितबुद्ध, बुद्धिऋद्धीयुत परममुनी।।

---

१. श्री गौतम गणधर विरचित निषीधिका दण्डक।

चैत्यवृक्ष जिनबिम्ब अकृत्रिम-कृत्रिम जितने त्रिभुवन में।
मेरा मंगल करें सभी ये, ये मंगलप्रद तिहुँजग में।।4।।

-अनुष्टुप् छंद-

तीर्थकृत्समवसृतौ, चतुर्थभूमिषु स्थिताः।
चैत्यवृक्षाश्चतुर्दिक्षु, ते मे कुर्वन्तु मंगलम्।।5।।

चैत्यवृक्षेषु चैत्यानि, चतुर्दिक्षु विभान्त्यपि।
तानि सर्वाणि बिम्बानि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।6।।

-चौबोल-छंद-

चौबीसों तीर्थंकर प्रभु को, भक्तिभाव से नमन करूँ।
उनके श्री चरणों में शत-शत, प्रणमन कर भवतपन हरूँ।।
जन्म-जरा -मृत्यु को नाशा, मृत्युञ्जयपद प्राप्त किया।
उनके चरणों के आश्रय से, मैंने समकित रत्न लिया।।7।।

।।अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

पूजा नं.-1

समवसरण पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

चौबिस जिनके समवसरण में, आठ भूमियां शोभें।
फूले कमल कुमुद पुष्पों से, वन उपवन मन लोभें।।
साधु आर्यिका श्रावक सुरगण, भक्ति भाव से वंदे।
पूजूँ जिनवर समवसरण को, अतिशय मन आनंदे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक-सोरठा

नीर सुरभि युत शुद्ध, त्रयधारा जिनपद करूँ।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन सुरभि युक्त, जिनपद पंकज चर्च के।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत उज्जवल धौत, पुंज धरूँ जिन अग्र मैं।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणायअक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित बहुविध पुष्प, जिनपद पंकज अर्पते।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर मोदक शुद्ध, जिनवर अग्र चढ़ाय के।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग ज्योती युक्त, दीपक से जिन पूजके।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशवस्तु विमिश्रित धूप, जिनवर सन्मुख खेवते।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणायअष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध फल रसयुक्त, जिनवर अग्र चढ़ाय के।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन मिश्रित अर्घ, भर भर थाल चढ़ाय के।
चौबीसों तीर्थेश, समवसरण पूजूँ सदा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणायअनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदि को नीर, सुवरण झारी में भरुँ।
मिले भवोदधितीर, जिनपद त्रयधारा करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला वकुल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
पुष्पांजलि को आप, चरण चढ़ाते यश बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा –

चिन्मय चिंतामणि प्रभो, गुण अनंत की खान।
समवसरण वैभव सकल, वह लवमात्र समान।।1।।

–शंभु छंद –

जय जय तीर्थंकर क्षेमंकर, तुम धर्म चक्र के कर्ता हो।
जय जय अनंतदर्शन सुज्ञान, सुखवीर्य चतुष्टय भर्त्ता हो।।
जय जय अनंत गुण के धारी प्रभु तुम उपदेश सभा न्यारी।
सुरपति की आज्ञा से धनपति रचता है त्रिभुवन मनहारी।।2।।

प्रभु समवसरण गगनांगण में, बस अधर बना महिमाशाली।
यह इन्द्र नीलमणि रचित गोल आकार बना गुणमणिमाली।।
सीढ़ी इक एक हाथ ऊँची, चौड़ी सब बीस हजार बनी।
नर बाल वृद्ध लूले लंगड़े चढ़ जाते सब अतिशायि घनी।।3।।

पहला परकोटा धूलिसाल, बहुवर्ण रत्न निर्मित सुंदर।
कहिं पद्मराग कहिं मरकतमणि, कहिं इन्द्रनीलमणि से मनहर।।
इसके अभ्यंतर चारों दिश, हैं मानस्तंभ बने ऊँचे।
ये बारह योजन से दिखते, जिनवर से द्विदश गुणे ऊँचे।।4।।

इनमें चारों दिश जिनप्रतिमा उनको सुरपति नरपति यजते।
ये सार्थक नाम धरें दर्शन से मानो मान गलित करते।।
इस समवसरण में चार कोट अरु पांच वेदिकाएं ऊँची।
इनके अंतर में आठ भूमि फिर प्रभु की गंधकुटी ऊँची।।5।।

इस धूलिसाल अभ्यंतर में है भूमि चैत्यप्रासाद प्रथम।
एकेक जैन मंदिर अंतर से पाँच पाँच प्रासाद सुगम।।
चारों गलियों में उभय तरफ दो दोय नाट्यशालाएं हैं।
अभिनय करतीं जिनगुण गातीं सुर भवनवासि कन्याएं हैं।।6।।

फिर वेदी वेढ़ रही ऊँची गोपुर द्वारों से युक्त वहाँ।
द्वारों पर मंगलद्रव्य निधी ध्वज तोरण घंटा ध्वनी महा।।
फिर आगे खाई स्वच्छ नीर से भरी दूसरी भूमी है।
फूले कुवलय कमलों से युत हंसों के कलरव की ध्वनि है।।7।।

फिर दूजी वेदी के आगे तीजी है लताभूमि सुन्दर।
बहुरंग बिरंगे पुष्प खिले जो पुष्पवृष्टि करते मनहर।।
फिर दूजा कोट बना स्वर्णिम, गोपुर द्वारों से मन हरता।
नवनिधि मंगल घट धूप घटों युत में प्रवेश करती जनता।।8।।

आगे उद्यान भूमि चौथी चारों दिश बने बगीचे हैं।
क्रम से अशोक वन सप्तवर्ण चंपक अरु आम्र तरु के हैं।।
प्रत्येक दिशा में एक-एक तरु चैत्य वृक्ष अतिशय ऊँचे।
इनमें जिन प्रतिमा प्रातिहार्ययुत चार-चार मणिमय दीखें।।9।।

इसके आगे वेदी सुन्दर फिर ध्वजाभूमि ध्वज से शोभे।
फिर रजतवर्णमय परकोटा गोपुर द्वारों से युत शोभे।।
फिर कल्पवृक्ष भूमी छट्ठी दशविध के कल्पवृक्ष इसमें।
प्रतिदिश सिद्धार्थ वृक्ष चारों हैं सिद्धों की प्रतिमा उनमें।।10।।

चौथी वेदी के बाद भवन भूमी सप्तमि के उभय तरफ।
नव नव स्तूप रत्न निर्मित, उनमें जिनवर प्रतिमा सुखप्रद।।
परकोटा स्फटिकमयी चौथा मरकत मणि गोपुर से सुन्दर।
उस आगे श्रीमंडप भूमी बारह कोठों से जनमनहर।।11।।

फिर पंचम वेदी के आगे त्रय कटनी सुन्दर दिखती हैं।
पहली कटनी पर यक्ष शीश पर धर्मचक्र चारों दिश हैं।।
दूजी कटनी पर आठ महाध्वज नवविधि मंगल द्रव्य धरे।
तीजी कटनी पर गंधकुटी पर जिनवर दर्शन पाप हरें।।12।।

जय जय जिनवर सिंहासन पर चतुरंगुल अधर विराज रहे।
जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी सुनकर सब भविजन तृप्त भये।।
सब जातविरोधी प्राणीगण, आपस में मैत्री भाव धरें।
जो पूजें ध्यावें गुण गावें वे जिनगुण संपति प्राप्त करें।।13।।

–दोहा–

सब जन को देता शरण, समवसरण जिन आप।
'ज्ञानमती' सुख संपदा, भरो पूर्ण निष्पाप।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–शंभु छंद–

जो भव्य प्रभु समवसरण की अर्चना करें।
संपूर्ण अमंगल व रोग, शोक, दुख हरें।।
निज आत्म के गुणों को संचित किया करें।
'सज्ज्ञानमती' से ही, जीवन सफल करें।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं.–2

समवसरण चैत्यवृक्ष पूजा

–अथ स्थापना –नरेन्द्र छंद –

बल्लीवनी को वेढ़कर, परकोट सुंदर स्वर्ण का।
चउ गोपुरों से युक्त उससे, बाद चौथी भूमि का।।
उपवन धरा के चार दिश में, चैत्य द्रुम अति सोहने।
उनके जिनेश्वर बिंब को, हम पूजते मन मोहने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-गीता छंद –

अति स्वच्छ शीतल नीर से, जिनपाद त्रयधारा करूँ।
निज मानसिक संताप शांती, हेतू मैं आशा धरूँ।।
उपवन धरा के चार दिश में, चैत्यद्रुम अति सोहने।
उनके जिनेश्वर बिंब को, हम पूजते मन मोहने।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरी का गंध सुरभित, घिस कटोरी भर लिया।
निज तापत्रय संहार हेतू, नाथ पद चर्चन किया।।उप.।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि धौत तंदुल चन्द्रदीधित, सम धवल के पुंज से।
तुम पूजते निज आत्म अक्षय सौख्य होवे भक्ति से।।
उपवन धरा के चार दिश में, चैत्यद्रुम अति सोहने।
उनके जिनेश्वर बिंब को, हम पूजते मन मोहने।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

दश दिश सुगंधित कर रहे, ये पुष्प बेला मल्लिका।
तुम पद कमल अर्पण किये, हो स्वात्म सुरभित संपदा॥उप.।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूआ अंदरसा पूड़ियाँ, हलुआ भराया थाल में।
निज भूख व्याधी दूर होने, हेतु अर्पूं आज मैं।।उप.।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर बाती जगमगे, तुम आरती रुचि से करूँ।
अज्ञान तम विध्वंस हो, निजज्ञान की ज्योती धरूँ।।उप.।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध मिश्रित धूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ अबे।
सब कर्म भस्मीभूत होकर, धूम्र के छल से भगें।।उप.।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर केला आम अमरख, फल मधुर बहु ले लिया।
तुम पाद अग्र चढ़ावते, निज आत्म सुख अनुभव किया।।उप.।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध आदिक अर्घ लेकर, स्वर्ण पुष्प मिलाइया।
यह अर्घ आप चढ़ाय के, निज आत्म निधि को पा लिया।।उप.।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिचतुर्दिक्चैत्यवृक्ष-संबंधिसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

सुवरण झारी में भरूँ, गंगानदि को नीर।
शांतिधारा त्रय करूँ, मिले भवोदधि तीर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंप चमेली केवड़ा, बेला वकुल गुलाब।
पुष्पांजलि अर्पण करत, शीघ्र स्वात्मसुख लाभ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ ९६ अर्घ्य

–सोरठा–

समवसरण प्रभु आप, त्रिभुवन की लक्ष्मी धरे।
पुष्पांजली समर्प, चैत्यवृक्ष जिन पूजहूँ।।1।।

इति मंडलस्योपरि उपवनभूमिचैत्यवृक्षस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छंद–

वृषभेश जिनके समवसृति में वनधरा में पूर्वदिश।
वन है अशोक कहा वहाँ तरु हैं कुसुम पत्रों भरित।।
उन मध्य एक अशोक तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्षसंबंधि-चतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृषभेश जिनके समवसृति दक्षिण दिशी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें बहुत फल पुष्प पत्रों से घने।।

उन मध्य सप्तच्छद तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणि जिनमूर्तियाँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृषभेश प्रभु के समवसृति में पश्चिमी वन भूमि में।
चंपक तरु शोभें बहुत सुरभित कुसुम पत्ते घने।।
उन मध्य चंपक चैत्य तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ समवसरण में उत्तरी वन भूमि में।
तरु आम्र के फल पुष्प पत्तों युत वहाँ शोभें घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्यतरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्षसंबंधि-चतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ समवसरण में पूर्वदिक् वनभूमि में।
तरु हैं अशोक अनेक विध पुष्पादि से शोभें घने।।
उन मध्य चैत्य अशोक तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भव्यजन का शरण जो इस दक्षिणी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें विविध फल पुष्प पत्रों युत घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में चारदिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्य-वृक्षसंबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भक्तजन को दे शरण उस पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभें बहुत विध पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य चंपक चैत्यतरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धनपति रचित इस समवसृति में उत्तरी वन भूमि में।
तरु आम्र के शोभें विविध फल पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्य तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव जिनेश्वर समवसृति में वन धरा में पूर्व दिक्।
तरुवर अशोक विभासते पुष्पादि से सौगंध युत।।
उन मध्य चैत्य अशोक तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधरगणों युत समवसृति में दक्षिणी वन भूमि में।
तरु सप्तछद शोभें विविध पुष्पादि से फूले घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिगण सहित जिन समवसृति में पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभें विविध पुष्पों सहित सुरभित घने।

उन मध्य चंपक चैत्य तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशगणों युत समवसृति में उत्तरी वन भूमि में।
बहु आम्र तरु शोभें विविध फल पुष्प पत्रों युत घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्यतरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिननाथ अभिनंदन समवसृति पूर्वदिक् वनभूमि में।
तरुवर अशोक विभासते बहु पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य चैत्य अशोकतरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदनजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसृति सौख्यकर दिस दक्षिणी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें वहाँ बहु पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदनजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराजपरिषद सर्वहितकर पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभे विविध कुसुमादि से सुरभित घने।।
उन मध्य चंपक चैत्य तरु में चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदनजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्चंपकचैत्य-वृक्षसंबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसृति सिद्धिप्रद की उत्तरी वनभूमि में।
तरु आम्र के शोभें बहुत विध पुष्प फल से युत घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्य तरु में चार दिश जिन मूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदनजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छंद –

सुमतिनाथ के समवसरण में, पूरब वन भूमी में।
तरु अशोक के वृक्ष घनेरे, शोक हरें पलपल में।।
उनके बीच अशोक चैत्यतरु, चउदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत उनको अर्घ चढ़ायें।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण में दक्षिण दिश उपवन भूमी में।
सप्तच्छद के वृक्ष घनेरे पुष्प सुगंधित उनमें।।
उनके बीच सप्तछद तरु में चहुंदिश जिनप्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत उनको अर्घ चढ़ायें।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब मंगलकर समवसरण में, पश्चिम वनभूमी में।
चंपक तरु हैं नित पुष्पों से सुरभि करें दशदिश में।।
उनके बीच वृक्ष चंपक में चहुंदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत उनको अर्घ चढ़ायें।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकोत्तम जिन समवसरण में उत्तर वन भूमी में।
आम्रवृक्ष हैं फल पुष्पों युत सुरनर रमतें उनमें।।

उनके बीच आम्रतरु इनमें चहुंदिश जिनप्रतिमाएँ।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत उनको अर्घ चढ़ायें।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मप्रभू के समवसरण में पूरब दिश उपवन में।
तरु अशोक सब पवन झकोरे हिलते हैं क्षण क्षण में।।
उनके बीच अशोक चैत्यतरु, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण सुखदाता, दक्षिण दिश उपवन में।
वृक्ष सप्तछद पृथिवीकायिक पुष्प पत्र हैं उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जन शरणभूत है, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक वृक्ष सुगंधित सुंदर, सुरगण रमते उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु चंपक, उसमें चहुँ दिश प्रतिमा।।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में उपवन भूमि उत्तरदिश में सोहें।
आम्रवृक्ष फल पुष्पों से युत सुरकिन्नर मन मोहें।।
उनके बीच आम्र चैत्यतरु उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्व जिनसमवसरण में, पूरबदिश उपवन में।
तरु अशोक हैं मणिमय पत्ते पुष्प लगे हैं उनमें।।
उनके बीच वृक्ष इक सुंदर उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण त्रिभुवन हितकारी, उसमें दक्षिण वन में।
वृक्ष सप्तछद मरकतमणिमय, पत्तों से युत उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण सब रोग शोकहर, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक वृक्ष रत्नमणि निर्मित उन सुगंधि दश दिश में।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण सब वैर कलह हर, उसमें उत्तर वन में।
आम्र वृक्ष सब कुबेर निर्मित, फल फूलोंयुत उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रप्रभू के समवसरण में, पूरब दिश उपवन में।
तरु अशोक उद्यान कुसुम युत शोक हरे हर पल में।।

उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण श्रेयस्कर, उसमें दक्षिण वन में।
वृक्ष सप्तछद विविध रत्नमय, पत्र पुष्प हैं उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण है विश्वहितंकर, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक तरु उद्यान मनोहर, खिले कुसुम उन सबमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण सब भव्य हितंकर, उसमें उत्तर वन में।
आम्रवृक्ष फल पुष्प भारयुत, सुरभि करें दशदिश में।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुँदिश प्रतिमा।
उनको पूजूँ सर्व सौख्यप्रद लोकोत्तर जिन महिमा।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–अडिल्ल छंद –

पुष्पदंत के समवसरण में वन मही[1]।
पूरब दिश में तरु अशोक वन सोभहीं।।

1. भूमि।

उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जिनवर का नवनिधि से भरा।
उसमें दक्षिण दिश सप्तच्छद वन धरा[1]।।
उसके बीच सप्तछद तरु इक शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत जिन अधर राजते गगन में।
समवसरण में चंपक वन दिश अपर में।।
उसके बीच चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत की दिव्यधुनी मुनिगण सुनें।
उत्तरदिश में आम्र वनी में तरू घने।।
उसके बीच आम्र चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।36।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिनका समवसरण शीतल करे।
उसमें पूरब दिश अशोक वन मन हरे।।
उसके मध्य अशोक वृक्षवन शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।37।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. भूमि।

समवसरण में चैत्यवृक्ष को मुनि नमें।
दक्षिण में सप्तच्छद वन में सुर रमें।।
उसके मध्य सप्तछद तरु इक शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।38।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यवृक्ष जिनप्रतिमा गणधर वंद्य हैं।
पश्चिमदिश में चंपक वन अभिनंद्य है।।
उसके मध्य चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।39।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरनर पूजें चैत्यवृक्ष जिनबिंब को।
उत्तर वन में चैत्य आम्रतरु बिंब को।।
यह वन मणिमय प्रतिमा से अति शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।40।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री श्रेयांसजिनसमवसरण अतिशय भरा।
त्रिभुवन जन क्षेमंकर पूरब वन धरा।।
उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।41।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण में सुरपति भक्त हैं।
दक्षिण दिश सप्तच्छद वन अतिरम्य है।।

उसके मध्य सप्तछद चैत्य तरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।42।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण सौ इन्द्रों वंद्य है।
पश्चिमदिश में चंपकवन अभिनंद्य है।।
उसके बीच चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।43।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में रोग शोक पीड़ा नहीं।
उत्तर दिश में सुंदर आम्रतरु मही।।
उसके बीचों आम्र चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।44।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य जिन समवसरण में राजते।
वहाँ पूर्ववन में अशोक तरू लसें।।
उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।45।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में भूख प्यास बाधा नहीं।
दक्षिण दिश में सप्तछद वन की मही।।
उसके मध्य सप्तछद तरुवर शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।46।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में अपमृत्यू भय दुख नहीं।
पश्चिमदिश चंपक वन अतिशय शोभहीं।।
उसके बीच चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।47।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में सम्यग्दृष्टी जा सकें।
उत्तरवन के जिन बिंबों को भज सकें।।
उसके बीच आम्रचैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब जजूँ मन मोहता।।48।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौबोल छंद –

विमलनाथ के समवसरण में, भविजन निजको शुद्ध करें।
उपवन भूमी के चारों दिश, जिनप्रतिमा की भक्ति करें।।
पूरबदिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।49।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में गणधर मुनिगण, सुरनर पशुगण भक्ति करें।
स्वपर भेद विज्ञान प्राप्त कर, चतुर्गती के दुःख हरें।।
दक्षिणदिश सप्तच्छद तरुवन, चैत्य वृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।50।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण में आलस निद्रा तंद्रा कष्ट नहीं।
रोग शोक दुख संकट मृत्यु वैर कलह विद्वेष नहीं।।

पश्चिमदिश चंपक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।51।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में जिनवर अतिशय क्रूर पशू गण शांत बने।
सभी वैर विद्वेष छोड़कर, करें परस्पर प्रेम घने।।
उत्तर दिशी आम्रतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।52।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अनंतजिन अंतक भयहर, गुण अनंत के स्वामी हैं।
समवसरण में अधर विराजें, त्रिभुवन अंतर्यामी हैं।।
पूरब दिश अशोकतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।53।।

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण सुरनिर्मित, नवनिधि सुख संपत्ति भरें।
जो जन पूजें भक्तिभाव से, सर्व अमंगल दोष हरें।।
दक्षिण दिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।54।।

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धनकुबेर ने सब संपत्ती, समवसरण में लाय धरी।
भव्यजनों के सर्वमनोरथ, तभी भक्ति ने पूर्ण करी।।
पश्चिमदिश चंपकतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।55।।

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बारह सभा बनी हैं उनमें, मुनिगण सुरनर पशु बैठे।
जिनवर दिव्यध्वनी सुन करके, चतुर्गती के दुख मेटे।।
उत्तरदिश में आम्र वृक्षवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।56।।

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ के समवसरण में धर्मामृत नित बरस रहा।
मुनी आर्यिका श्रावक और श्राविका रुचि से पियें अहा।।
पूरबदिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।57।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण यह असंख्य भवि को, धर्मसुधा से तृप्त करे।
भवअनंत के अगणित दुख को इक, क्षण में ही नष्ट करें।।
दक्षिणदिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।58।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण को वंदत, सप्त परमस्थान मिले।
भक्ती में रत भव्यजनों के, मन की कलियाँ शीघ्र खिलें।।
पश्चिमदिश चंपक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।59।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर वंदत इन्द्र संपदा, चक्रवर्ति साम्राज्य मिले।
अधिक और क्या जिनगुण संपद मुक्तिरमा सहशीघ्र मिले।।

उत्तरदिश में आम्र तरूवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।60।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिनाथ के समवसरण में, इन्द्रराज भी भक्त बनें।
भक्तपूर्ण शांती को पाकर, जन्म मृत्यु का कष्ट हनें।।
पूरब दिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।61।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में सुरललनायें, भक्तिभाव से नृत्य करें।
धवल चंद्रकिरणों सम उज्ज्वल, प्रभु की गुण कीर्ती उचरें।।
दक्षिण दिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।62।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में शारीरिक, मानस आगंतुक कष्ट नहीं।
षट्ऋतु के फल फूल वहाँ, इक साथ फलें फूलें नित ही।।
पश्चिमदिश में चंपक तरु वन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।63।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में जिन प्रभाव से, वैर कलह संघर्ष नहीं।
सिंह हिरण अरु सर्प नेवला, प्रेम परस्पर करें सही।।
उत्तरदिश उद्यान आम्र का चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, पूजत सुख संपत्ति बढ़े।।64।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सखी छंद–

श्री कुंथुनाथ जिनदेवा, तुम समवसरण दुख छेवा।
उपवन अशोक पूरब में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।65।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण के अन्दर, सौधर्म इन्द्र प्रभु किंकर।
वन सप्तच्छद दक्षिण में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।66।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिनाथ प्रभू गुण भजते, सुर किन्नर पूजा रचते।
चंपक वन पश्चिम दिश में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।67।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर तुम गुण को गाते, निज में परमानंद पाते।
वन आम्र तरू उत्तर में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।68।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन अरहनाथ मुनिनाथा, इन्द्रादि नमाते माथा।
उन समवसरण पूरब में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।69।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसमवसरण अतिशायी, त्रिभुवनजन को सुखदायी।
सप्तच्छद वन दक्षिण में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।70।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर सन्निध पा करके, भविजन भव भव दुख हरते।
चंपक वन पश्चिम दिश में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।71।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चहुँदिश प्रतिमा के सन्मुख, हैं मानस्तंभ चतुर्मुख।
आमों का वन उत्तर में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।72।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनमल्लिनाथ भव विजयी, उन समवसरण सुखकरई।
उपवन अशोक पूरब में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।73।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजपरमानंद सुखदाता, जो भजे सर्व सुख पाता।
सप्तच्छदवन दक्षिण में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।74।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आतम रस सुख पायो, उन समवसरण शिर नायो।
चंपक तरुवन पश्चिम में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।75।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण जो यजते, उन सर्व मनोरथ फलते।
आमों का वन उत्तर में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।76।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत जिन भवहर्ता, उन पूजत सब सुख भर्ता।
उपवन अशोक पूरब में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।77।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण की पूजा, इस सम नहिं हितकर्दूजा।
सप्तच्छद वन दक्षिण में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।78।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आधि व्याधि परिहारे, जिन समवसरण गुणधारे।
चंपक वन पश्चिम दिश में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।79।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समवसरण मन धारें, वे दुख दारिद सब टारें।
आमों का वन उत्तर में, जजुँ चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।80।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

समवसरण नमिनाथ का, सब सुख का भण्डार।
वन अशोक पूरब दिशी, जजूँ चैत्यतरु सार।।81।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दस धर्मों का कल्पतरु, समवसरण सुखकार।
सप्तच्छदवन दक्षिणी, जजूँ चैत्यतरु सार।।82।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की अद्भुत सभा, भविजन सुख दातार।
चंपक वन पश्चिम दिशी, जजूँ चैत्य तरु सार।।83।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म जन्म के पाप सब, नाशूँ जिनगुणधार।
आम्रवनी उत्तर दिशी, जजूँ चैत्य तरु सार।।84।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमिनाथ की भक्ति से, मिले स्वात्म साम्राज्य।
तरु अशोक वन पूर्वदिश, जजूँ चैत्यतरु आज।।85।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जिनराज का, त्रिभुवन सुख साम्राज।
दक्षिण दिश वन सप्तछद, जजूँ चैत्यतरु आज।।86।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनभक्ती से इन्द्र पद, मिले चक्रि साम्राज्य।
चंपक वन पश्चिम दिशी, जजूँ चैत्यतरु आज।।87।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन भक्ती से ही मिले, मुक्तिपुरी का राज।
उत्तर दिश में आम्रवन, जजूँ चैत्यतरु आज।।88।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण प्रभुपार्श्व का, सब मंगल करतार।
तरु अशोकवन पूर्वदिश, जजूँ चैत्यतरु सार।।89।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व अमंगल दोषहर, धर्मतीर्थ करतार।
दक्षिण दिश वन सप्तछद, जजूँ चैत्यतरु सार।।90।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम मंत्र जिन पार्श्व का, सर्व सौख्य दातार।
चंपक वन पश्चिमदिशी, जजूँ चैत्यतरु सार।।91।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संकट मोचन पार्श्वप्रभु, कलियुग दुख हरतार।
उत्तर दिश में आम्रवन, जजूँ चैत्यतरु सार।।92।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जिन वीर का, अतिशय गुण भंडार।
जजुँ अशोक तरु बिंब को, सर्व सौख्य भण्डार।।93।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपूर्वदिक्अशोकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन सन्मति दें सन्मती, कुमति विनाशनहार।
जजूँ सप्तछद बिंब को, सर्व सौख्य भण्डार।।94।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिदक्षिणदिक्सप्तच्छदचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्द्धमान भगवान का, समवसरण सुखकार।
चंपक तरु प्रतिमा जजूँ, सर्व सौख्य भण्डार।।95।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिपश्चिमदिक्चंपकचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर प्रभू का नाम है, स्वातम निधि दातार।
आम्र वृक्ष प्रतिमा जजूँ, सर्व सौख्य भण्डार।।96।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनसमवसरणस्थितउपवनभूमिउत्तरदिक्आम्रचैत्यवृक्ष-संबंधिचतुर्मानस्तम्भसहितचतुर्जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ-शंभु छंद –

चौबिस जिनवर के समवसरण में, चौथी उपवन भू मानी है।
चारों दिश इक इक चैत्य वृक्ष, चहुँदिश जिनप्रतिमा मानी हैं।।

चारों दिश की जिन प्रतिमा के, सन्मुख में मानस्तंभ खड़े।
मैं पूजूँ अर्घ चढ़ा करके, दिन पर दिन सुख सौभाग्य बढ़े।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिसंबंधिषण्णवति-चैत्यवृक्ष-चतुरशीत्यधिकत्रिशतजिनप्रतिमातावत्प्रमाणमानस्तम्भसंबंधिषट्त्रिंश दधिकएकसहस्रपंचशतजिनप्रतिमाभ्यःपूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणचैत्यवृक्षस्थितसर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः।**

(श्वेत सुगंधित पुष्पों से या लवंग से या पीले चावलों से 108 बार या 27 बार जाप्य करना)

जयमाला

–दोहा–

नासा दृष्टी सौम्य छवि, जिनवर सम जिनबिंब।
नमूँ नमूँ मस्तक नमां, पाऊँ सौख्य अनिंद्य।।1।।

–शंभु छंद–

जय जय श्री जिनवर समवसरण, जयजय चौथी उपवन भूमी।
जय जय मणिमय जिन चैत्यवृक्ष, जय जय सुर नर वंदित भूमी।।
जय जय गणधर गुरु से वंदित, जय जय मुनिगण विहरण भूमी।
जय जय अशोक सप्तच्छद अरु, चंपक व आम्रवन की भूमी।।2।।

परकोटा दूजा स्वर्णमयी, चउ गोपुर द्वारों से युत है।
व्यंतर सुर मुद्गर लेकर के, जिनभक्त वहाँ पर रक्षक हैं।।
तोरण द्वारों के उभय तरफ, अठ विध के मंगल द्रव्य धरे।
प्रत्येक एक सौ आठ कहे, ये सर्व अमंगल दोष हरें।।3।।

उसके आगे वेष्टित करके, उपवन भूमी अति शोभ रही।
दिशक्रम से अशोक सप्तच्छद, चंपक व आम्रवन दिखें वहीं।।
चारों दिश इक इक चैत्य वृक्ष, प्रभु से बारह गुणिते ऊँचे।
प्रत्येक चैत्यतरु में चारों, दिश इक-इक जिन प्रतिमा दीखें।।4।।

ये आठ प्रातिहार्यों संयुत, मणिमय श्रीजिन प्रतिमाएं हैं।
हर प्रतिमाओं के सन्मुख इक, इक मानस्तंभ कहायें हैं।।
ये तीन कोट से परिवेष्टित त्रय कटनी के ऊपर शोभें।
मानस्तंभों के चारों दिश इक इक जिन प्रतिमाएँ शोभें।।5।।

चौबिस जिनवर के उपवन में, छ्यानवे चैत्यतरु माने हैं।
उनमें त्रय शतक सुचौरासी, मणिमय जिनबिंब बखाने हैं।।
इनके मानस्तंभ तीन शतक चौरासी ही हो जाते हैं।
चारों दिश जिनवर बिंब सभी पन्द्रह सौ छत्तिस गाते हैं।।6।।

इन जिनबिंबों को भक्ती से जो नित प्रति वंदन करते हैं।
वे सर्व मनोरथ पूर्ण करें, क्रम से शिव लक्ष्मी वरते हैं।।
इन उपवन में कहिं बावड़ियाँ कहिं क्रीड़ा पर्वत दिखते हैं।
कहिं भवन बने सुन्दर ऊँचे, इनमें सुर नर नित रमते हैं।।7।।

पूरबदिशवन में बावड़ियाँ[1] नंदा नन्दोत्तर आनन्दा।
नन्दवती व अभिनन्दिनी नन्दिघोषा जलभरी महानन्दा।।
जो जन इनकी पूजा करते वे उदय सुफल को पाते हैं।
वापी से पुष्पों को लेकर जिनबिंब पूजते जाते हैं।।8।।

दक्षिणदिश विजय तथा अभिजय, जैत्री व वैजयन्ती वापी।
अपराजित जयोत्तरा नामा ये यजत विजय फल को देतीं।
पश्चिमदिश कुमुदा नलिनी अरु, पद्मा पुष्करा वापियाँ हैं।
विश्वोत्पला, कमला ये छह, यजते प्रीति फल देती हैं।।9।।

उत्तर में प्रभासा भासवती भासा सुप्रभा भरीं जल से।
पुन भानुमालिनी स्वयंप्रभा, ख्याती फल देतीं पूजन से।।
वापी जल से स्नान किये, भवि जन इक भव को देखे हैं।
उस जल अवलोकन से निज के ही सात भवों को देखे हैं।।10।।

इन उदय और प्रीती फलदा बावड़ियों के मधि मारग के।
द्वय तरफी तीन तीन खन की बत्तीस नाट्यशाला दीखें।।

1. हरिवंशपुराण सर्ग 57 श्लोक 32 से यह प्रकरण लिया है।

प्रत्येक में बत्तिस बत्तिस, ज्योतिषि, देवी नर्तन करती हैं।
वे हाव भाव से तन्मय हो, जिनवर गुण कीर्तन करती हैं।।11।।

हम नित्य नमें जिन प्रतिमा को सारे कलिमल धुल जावेंगे।
निज आत्म सुधारस पीकर के निज में ही तृप्ती पावेंगे।।
सब आधि व्याधि पीड़ा संकट, इक क्षण में ही नश जावेंगे।
निज 'ज्ञानमती' केवल करके, सिद्धालय में बस जावेंगे।।12।।

–घत्ता –

जय जय जिन प्रतिमा, अनवधि महिमा, जय जिनवरगुण पूर्णभरे।
जय सर्व सुखाकर, गुण रत्नाकर पूजक भवदधि तूर्ण तरें।।13।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितउपवनभूमिसंबंधिमानस्तंभसहित-सर्वचैत्यवृक्षजिनप्रतिमाभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–शंभु छंद–

जो भविजन प्रभु समवसरण के, सब चैत्यवृक्ष को यजते हैं।
श्री जिनबिम्बों के वंदन से, सम्पूर्ण सौख्य को भजते हैं।।
प्रभु समवसरण में जा करके, अगणित वैभव को निरखे हैं।
वे निश्चित ही सम्पूर्ण 'ज्ञानमति', जिनगुण संपति लभते हैं।।

।। इत्याशीर्वादः ।

प्रशस्ति

–शंभु छंद–

श्री शांति कुंथु अरनाथ प्रभू ने, जन्म लिया इस धरती पर।
यह हस्तिनागपुरि इंद्रवद्य, रत्नों की वृष्टि हुई यहाँ पर।।
यहाँ जम्बूद्वीप बना सुंदर, जिनमंदिर हैं अनेक सुखप्रद।
मेरा यहाँ वर्षायोग काल, स्वाध्याय ध्यान से है सार्थक।।1।।

इस युग के चारित्र चक्री श्री, आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथमसूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रंथों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।2।।

यह चैत्यवृक्ष का लघु विधान, जिन प्रतिमा वंदन भक्तीवश।
यह रोग शोक दारिद्र्य, दुःख संकट हरने वाला संतत।।
तब तक यह गणिनी ज्ञानमती, कृति श्री विधान जयशील रहे।।
जब तक चौबीसों जिनवर का, जिनशासन जग में मान्य रहे।।3।।

।। इति श्रीसमवसरणचैत्यवृक्षविधानम् संपूर्णम्।।

।।जैनं जयतु शासनम्।।

समवसरण चैत्यवृक्ष की आरती

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

मैं तो आरती उतारूं रे, अरिहन्त जिनवर की।
जय जय अरिहन्त प्रभू, जय जय जय।।टेक.।।
प्रभु समवसरण में चतुर्थ, उपवन भूमी है.....उपवन भूमी है।
चार दिश में वहां चैत्यवृक्ष, महिमा सुनी हमने.....महिमा सुनी हमने।
सबमें चार जैनबिम्ब, अरिहंत चैत्यबिम्ब, उनमें विराजित हैं,
हो..... जिनवर उनमें विराजित हैं। मैं तो .....।।1।।
पूर्व दिशि आदि क्रम से अशोक, सप्तछद चंपक हैं.....
सप्तछद चंपक हैं।
चौथे आम्र चैत्यवृक्ष के तले, चार प्रभु अरिहंत हैं .....
चार प्रभु अरिहंत हैं।।
इनको बारबार नमन, याद करूँ समवसरण, महिमा निराली है,
हो ..... जिसकी महिमा निराली हैं।।मैं तो .....।।2।।
छियानवे चैत्यवृक्ष कहे, चौबीस जिनवर के..... चौबीस जिनवर के।
तीन सौ चौरासी हैं, जिनबिम्ब भी उनमें .....जिनबिम्ब भी उनमें।।
सबके पास मानस्तंभ, उनमें चार चार बिम्ब, सुन्दर विराजित हैं,
हो ..... प्रभु सुन्दर विराजित हैं।। मैं तो .....।।3।।
चैत्यवृक्ष विधान लिख दिया, ज्ञानमती माताजी ने.....
ज्ञानमती माताजी ने।
पुण्य अर्जन का अवसर दिया, गणिनी शिरोमणि ने.....
गणिनी शिरोमणि ने।।
''चंदनामति'' भक्ति करे, दर्शन की शक्ति मिले, सच्चा यही है दरबार,
हो ..... सच्चा यही है दरबार। मैं तो .....।।4।।

समवसरण की आरती

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

चौबीस जिनवर के समवसरण की, मंगलदीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।

समवसरण के बीच प्रभू जी नासादृष्टि विराजे।
गणधर मुनि नरपति से शोभित, बारह सभा सुराजे।।प्रभु जी....
ओंकार ध्वनि, सुन करके मुनि, रत रहें स्वपर कल्याण में,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।1।।

चार दिशा के मानस्तभों को भी मेरा वंदन।
मिथ्यादृष्टि जिनको लखकर पाते सम्यग्दर्शन।।प्रभु जी.....
करके दर्शन, प्रभु का वन्दन, सम्यक् का हुआ प्रचार है,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।2।।

ध्वजाभूमि के अन्दर देखो, ऊँचे ध्वज लहराएँ।
मालादिक चिन्हों से युत वे, जिनवर का यश गाएँ।। प्रभु जी.....
शुभ कल्पवृक्ष, सिद्धार्थ वृक्ष, से समवसरण सुखकार है।
मैं आज उतारूँ आरतिया।।3।।

भवनभूमि के स्तूपों में, जिनवर बिंब विराजें।
द्वादशगण युत श्री मण्डप में, सम्यग्दृष्टि राजें।।प्रभु जी.....
अगणित वैभव, युत बाह्य विभव से, शोभ रहें भगवान हैं,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।4।।

धर्मचक्रयुत गंधकुटी पर, अधर प्रभू रहते हैं।
उनकी आरति से ही 'चन्दना' भव आरत टरते हैं।। प्रभु जी.....
प्रभु ऋषभदेव से महावीर तक महिमा अपरंपार है।
मैं आज उतारूँ आरतिया।।5।।

समवसरण विंशतिका

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजा

–दोहा –

सरस्वती लक्ष्मी जहाँ, नितप्रति करें प्रणाम।
पुण्यमयी उस धाम का, समवसरण है नाम।।

समवसरण का स्वरूप

छंद-विष्णुपद (कहाँ गये चक्री-बारहभावना)

जहाँ पहुँचते ही दर्शक का पाप शमन होता।
जहाँ पहुँचते ही मानी का मान गलन होता।।
सबको शरण प्रदाता वह ही समवसरण माना।
जिनवर की उस धर्मसभा को नमूँ परमधामा।।1।।

समवसरण के स्वामी

तीर्थंकर प्रभु तप करके बनते केवलज्ञानी।
वे ही बन अरिहंत कहाते समवसरण स्वामी।।
इन्द्राज्ञा से धनकुबेर रचता इक धर्मसभा।
नमूँ उसे नश जाती जिससे भव की पूर्ण व्यथा।।2।।

मानस्तंभ का महत्व

समवसरण की चार दिशा में मानस्तंभ बने।
जिनवर से बारह गुणिते ऊँचे अप्रतिम घने।।
मुख्यद्वार में जाते ही उनका दर्शन होता।
नमूँ वही मानस्तंभ जहाँ मिथ्यात्व वमन होता।।3।।

चैत्यप्रासाद भूमि

प्रथम कोट जो धूलिसाल उससे आगे भूमी।
चैत्यभवन एवं महलों से सहित प्रथम भूमी।।
देव मनुज क्रीड़ा करते वहाँ जाते पुण्यात्मा।
जिनप्रतिमा युत चैत्य भूमि को नमें महानात्मा।।4।।

खातिका भूमि

वेदी के पश्चात् खातिका भू में पुष्प खिले।
जो नव पुष्प कहीं नहिं मिलते वे भी वहाँ मिलें।।
जल से भरी खातिका में भव्यों के भव दिखते।
पावन समवसरण की भू को नमूँ सदा शुचि से।।5।।

लताभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर है लताभूमि सुन्दर।
जाते जहाँ मनोरंजन करने को इन्द्र प्रवर।।
कहीं न दिखने वाली दिव्य लताएँ मन हरतीं।
नमूँ तृतिय भूमी को जो संताप सभी हरती।।6।।

उपवन भूमि

दूजे परकोटे के नन्तर उपवन भूमी है।
सप्तच्छद चंपक अशोक वन आम्र की पंक्ती हैं।।
चैत्यवृक्ष चारों दिश में एकेक कहे जाते।
नमूँ जिनेन्द्रों की प्रतिमा मन उपवन खिल जाते।।7।।

ध्वजा भूमि

वेदी के पश्चात् पाँचवी ध्वजाभूमि आती।
दशचिन्हों से युक्त ध्वजा केशरिया लहराती।।
परम अहिंसा का ध्वज लेकर जग में लहराओ।
भक्तिसहित प्रभु समवसरण को बंधु! शीश नावो।।8।।

कल्पभूमि

परकोटा तृतीय के नन्तर कल्पवृक्ष भूमी।
दशविध कल्पवृक्ष से जनता मांग करे पूरी।।
वहाँ बने सिद्धार्थ वृक्ष में सिद्धों की प्रतिमा।
उन सिद्धों को नमते ही निज कार्य सिद्धि करना।।9।।

भवनभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर इक भवनभूमि आती।
नव नव स्तूपों से युत महिमा गाई जाती।।

अर्हत् सिद्धों की प्रतिमाएँ उनमें राज रहीं।
उसी भवनभूमी को वंदूँ जो है पुण्यमही।।10।।

श्रीमण्डपभूमि

चौथा स्फटिकमयी परकोटा श्रीमण्डपभूमी।
समवसरण में सबसे अंतिम है अष्टमभूमी।।
वहाँ बने द्वादश कोठों में भव्यजीव बैठें।
नमन करूँ इस भू को जिसके सम्मुख जिन तिष्ठें।।11।।

बारह सभा वर्णन

गणधर मुनि साक्षात् प्रभू के वचन ग्रहण करते।
प्रथम सभा में इसीलिए स्थान ग्रहण करते।।
पुनः आर्यिका देव-देवियाँ मनुज पशू रहते।
जिनवर की दिव्यध्वनि सुनकर जन्म सफल करते।।12।।

गंधकुटी की महिमा

समवसरण के मध्य गंधकुटी में हैं तीर्थंकर।
मुख है एक तथापी दिखते सभी ओर जिनवर।।
इसीलिए तो चतुर्मुखी ब्रह्मा माने जाते।
नमूँ प्रभू की गंधकुटी जहाँ दिव्य सुरभि व्यापे।।13।।

तीर्थंकर महिमा

धर्मतीर्थ जो करें प्रवर्तित तीर्थंकर होते।
चार घातिया कर्म नाश कर वे जिनवर होते।।
उनके कल्याणक में रत्नों की वृष्टी होती।
उन्हें नमूँ तो निश्चित ही मेरी मुक्ती होगी।।14।।

ॐकाररूप दिव्यध्वनि

तीर्थंकर की दिव्यध्वनि ॐकारमयी खिरती।
सात शतक अट्ठारह भाषामय हो परिणमती।।
समवसरण में देव मनुज पशु सभी समझ जाते।
नमूँ दिव्यध्वनि को जिसको केवलज्ञानी पाते।।15।।

गणधर की महिमा

श्रीजिनेन्द्र की वाणी गणधर ही झेला करते।
चारज्ञान से द्वादशांग की रचना वे करते।।
भव्यों के प्रश्नों का उत्तर उनसे ही मिलता।
चौदह सौ बावन गणधर को नमूँ हृदय खिलता।।16।।

प्रमुख श्रोता का पुण्य

दिव्यध्वनि को सुनने वाले एक प्रमुख श्रोता।
होते हैं प्रत्येक समवसरण में इक श्रोता।।
प्रथम भरत अंतिम श्रेणिक ने प्रश्न किये बहुते।
मैं भी बनूँ प्रमुख श्रोता वन्दन कर प्रभु पद में।।17।।

समवसरण का प्रभाव

जहाँ-जहाँ तीर्थंकर का शुभ समवसरण बनता।
वहाँ-वहाँ दुर्भिक्ष आदि सारा संकट टलता।।
शेर गाय भी वैर छोड़ मैत्री धारण करते।
समवसरण के इस प्रभाव को नमूँ भक्ति करके।।18।।

तीर्थंकर के श्रीविहार में स्वर्णकमल रचना

केवलज्ञानी तीर्थंकर जब श्रीविहार करते।
समवसरण विघटित हो जाता गमन गमन करते।।
देवप्रभू के चरणकमल तल स्वर्ण कमल रचते।
सोने में सुगंधि को वे चरितार्थ तभी करते।।19।।

समवसरण दर्शन का महत्व

इस कलियुग में समवसरण साक्षात् नहीं बनते।
चूँकि यहाँ पर तीर्थंकर अब जन्म नहीं धरते।।
फिर भी ये जिनमंदिर भी हैं समवसरण माने।
कालचतुर्थ सदृश इनके दर्शन से भव हानें।।20।।

समवसरण श्रीविहार की महिमा

ऐसा ही इक समवसरण इस धरती पर आया।
ऋषभदेव के उपदेशों को उसने फैलाया।।

गणिनी माता ज्ञानमती की सूझबूझ जानो।
कलियुग में भी सतयुग का दर्शन पाया मानो।।21।।

उपसंहार

हे प्रभु! वर दो मुझको सच्चा समवसरण पाऊँ।
समवसरण के स्वामी तीर्थंकर का पद पाऊँ।।
जब तक वह पद मिले नहीं सम्यक्त्व नहीं छूटे।
उसके बाद ''चंदनामति'' चाहे सब कुछ छूटे।।1।।

–दोहा –

वीर संवत् पच्चीस सौ, चौबिस की कृति जान।
दुतिया कृष्ण आषाढ़ में, किया प्रभू गणगान।।1।।

समवसरण की भक्ति यह, पूर्ण करे सब आश।
यही चन्दनामति हृदय, में है शुभ अभिलाष।।2।।

समवसरण चालीसा

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

-दोहा-

नमन करूँ प्रभु सिद्ध को, सिद्धशिला के नाथ।
अरिहन्तों को भी नमूँ, समवसरण के साथ।।1।।
तीर्थंकर श्री ऋषभ का, प्रथम बना वह धाम।
कहा जिसे संसार में, समवसरण अभिराम।।2।।
समवसरण वैभव वही, कहूँ अंश इक मात्र।
चालीसा माध्यम बने, गुणवर्णन में सार्थ।।3।।

-चौपाई-

समवसरण लक्ष्मी की जय हो, तीर्थंकर प्रकृती की जय हो।।1।।
हों जयवन्त अनन्त चतुष्टय, जय जय प्रभु का वैभव अक्षय।।2।।
तप कर दिव्यज्ञान जब पाते, समवसरण वैभव प्रगटाते।।3।।
धरती से ऊँचे उठ जाते, बीस हजार हाथ तक जाते।।4।।
इन्द्राज्ञा से धनकुबेर तब, रचता समवसरण का वैभव।।5।।
बीस हजार सीढ़ियाँ बनतीं, जिस पर चढ़ जनता नहिं थकती।।6।।
बाल वृद्ध रोगी चढ़ जाते, मिनटों में प्रभुदर्शन पाते।।7।।
चउ परकोटे पाँच वेदियाँ, इनके मधि हैं आठ भूमियाँ।।8।।
धूलिसाल परकोटा पहला, मणियों की रज युक्त सुनहला।।9।।
भूमि चैत्यप्रासाद प्रथम है, जिनदर्शन से कटे विघन हैं।।10।।
पुनः वेदिका है चउतरफी, दूजी भूमि खातिका दिखती।।11।।
उस खाई में फूल खिले हैं, जल में सबके भव दिखते हैं।।12।।
वेदी वेष्टित लताभूमि है, आगे परकोटा स्वर्णिम है।।13।।
उपवन भूमी में चम्पक वन, आम्र अशोक सप्तछद के वन।।14।।
प्रतिवन में इक चैत्यवृक्ष हैं, जिनमें जिनप्रतिमा सम्मुख हैं।।15।।
वेदी आगे ध्वजाभूमि है, महाध्वजा लघु ध्वजा सहित है।।16।।
तीजा रजतमयी परकोटा, पुनः कल्पभूमी की शोभा।।17।।
कल्पवृक्ष दश इनमें दिखते, चार बने सिद्धार्थ वृक्ष हैं।।18।।

उनमें सिद्धों की प्रतिमाएँ, सिद्ध करें सबकी इच्छाएँ।।19।।
वेदी नन्तर भवन भूमि है, जिसमें नव-नव बनें स्तूप हैं।।20।।
अर्हत्सिद्धों की प्रतिमाएँ, कहतीं समवसरण महिमा ये।।21।।
पुनः बना स्फटिक कोट है, अंतिम चौथा वह सुकोट हैं।।22।।
श्रीमण्डप भूमी फिर अष्टम बारह सभा वहीं सुन्दरतम।।23।।
प्रथम सभा में गणधर मुनि हैं, कल्पवासि देवियाँ दुतिय में।।24।।
तीजी में आर्यिका-श्राविका, चौथी में ज्योतिषी देवियाँ।।25।।
व्यन्तर देवी हैं पंचम में, भवनवासि देवी षष्ठम में।।26।।
देव भवनवासी सप्तम में, व्यन्तर देव सभा अष्टम में।।27।।
नवमी में ज्योतिषी देव हैं, कल्पवासि फिर कहे देव हैं।।28।।
ग्यारहवीं में मनुज चक्रि हैं, बारहवीं में सिंह चक्रि है।।29।।
असंख्य प्राणी बैठ सभा में, प्रभु की दिव्यध्वनी को सुनते।।30।।
वेदी नन्तर गंधकुटी है, जिसमें पहले त्रय कटनी है।।31।।
मंगल द्रव्य अष्ट वहाँ शोभें, पहली कटनी उनसे युत है।।32।।
दूजी पर अठ महाध्वजाएँ, प्रभु की कीर्तिध्वजा फहराएँ।।33।।
तीजी कटनी पर सिंहासन, लाल कमल कर्णिका है आसन।।34।।
उससे अधर चार अंगुल पर, ऋषभदेव जी राजे जिनवर।।35।।
चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाते, दिव्यध्वनि ॐकार सुनाते।।36।।
अष्टप्रातिहार्यों से संयुत, शासन देव-देवियों से युत।।37।।
इत्यादिक अनेक वैभव से, शोभित प्रभु का समवसरण है।।38।।
कब साक्षात् दर्श हो उसका, तीर्थंकर के समवसरण का।।39।।
इक दिन ऐसा समवसरण भी बने ''चन्दना'' मिटे मरण भी।।40।।

-दोहा-

वीर संवत् पच्चीस सौ, चौबिस है विख्यात।
माघ शुक्ल पंचमि तिथी, रचा गया यह पाठ।।1।।
ज्ञानमती गणिनीप्रमुख, की शिष्या अज्ञान।
रचा ''चन्दनामति'' सुखद, जिनवर का गुणगान।।2।।
चालिस दिन तक जो पढ़े, यह चालीसा पाठ।
समवसरण दर्शन उसे, मन में देगा ठाठ।।3।।

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–धीरे-धीरे बोल.....

ज्ञानमती माताजी की वाणी सुन लो।।
वाणी सुन लो, जिनवाणी सुन लो।।
जनवाणी भव भव में सुनी, जिनवाणी सुनकर ना गुनी।।
ज्ञानमती माताजी.....।।टेक.।।

ज्ञान के मोती का हैं ये भण्डार
ज्ञान की ज्योती इनमें भरी अपार।
वीरसिंधु से दीक्षा ली स्वीकार,
पुनः ज्ञानमति नाम किया साकार।।
मुझे ज्ञान दो, विज्ञान दो,
जनवाणी भव-भव में सुनी, जिनवाणी सुनकर ना गुनी।।
ज्ञानमती माताजी.....।।1।।

जग में है अंधियारी काली रात,
उसमें दे आलोक तुम्हारी बात।
स्वारथ के सब बंधु भ्रात औ तात,
कैसे छोड़ूँ मोह बताओ मात।।
मुझे ज्ञान दो, विज्ञान दो,
जनवाणी भव-भव में सुनी, जिनवाणी सुनकर ना गुनी।।
ज्ञानमती माताजी.....।।2।।

आतम तत्त्व बताना इनका काम,
हम माने तो पाएँगे निजधाम।
सार्थक हो ''चन्दना'' हमारा नाम,
मिल जावे जब अपना आतमराम।।
मुझे ज्ञान दो, विज्ञान दो,
जनवाणी भव-भव में सुनी, जिनवाणी सुनकर ना गुनी।।
ज्ञानमती माताजी.....।।3।।